दिल्ली केन्द्र की अस्थिरता के कारण
सदारंग परम्परा के अधिकांश कलाकार
अवध और रामपुर रियासतों में जाकर बस गए, जहां उन्हें आश्रय प्राप्त हुआ।
अवध के नवाब वाजिद अली शाह ने भी अपना सम्पूर्ण जीवन मुग़ल सम्राट मुहम्मद
शाह रंगीले की तरह 'संगीत कला' के उत्थान के लिए लगा दिया। जब अवध में
भी राजनैतिक अशान्ति प्रारंभ हो गई तब वहां के कलाकारों को भी इधर-उधर
आश्रय ढूंढ़ना पड़ा जिसमें रामपुर दरबार ही ऐसा था जिसने सभी कलाकारों का
स्वागत किया। अतः संगीत के इतिहास में रामपुर दरबार के शासकों का नाम
स्वर्णाक्षरों में लिखा जाना चाहिए जिन्होंने दृढ़ संकल्प होकर संगीत की अमूल्य
परम्परा की रक्षा करके उसे जीवित रखा। आज उसी का परिणाम है कि देश
के मूर्धन्य कलाकार जैसे स्व० अलाउद्दीन खां, स्व० हाफिज अली खां, स्व० मुश्ताक
हुसैन खां और स्व० भातखण्डे जी, स्व० आचार्य बृहस्पति जैसे रत्नपारखी लोगों
ने रामपुर में विकसित इस परम्परा से लाभ उठाया। इस अध्याय में रामपुर की
सदारंग-परम्परा के रहस्य पर प्रकाश डालेंगे जिसका प्रतिनिधित्व स्व० भातखण्डे
जी और स्व० आचार्य बृहस्पति जी करते हैं।

सदारंग परंपरा से संबंध

किसी कला का सम्बन्ध परम्परा अथवा सम्प्रदाय से बहुत गहरा होता है। क्योंकि 'सम्प्रदाय' का अर्थ है 'सम्—भलीभांति,' 'प्र—प्रकर्षपूर्ण' और 'दाय—पूर्वजों की सम्पत्ति'। जो कला पूर्वजों द्वारा परिश्रम से, विधिवत् शिक्षा द्वारा प्राप्त होती है उसको ही हम सम्प्रदाय अथवा परम्परा कहते हैं। आजकल संगीत के क्षेत्र में घरानों का नाम लेने का प्रचलन बहुत हो गया है। किन्तु 'घराने' का क्षेत्र सीमित हो जाता है, उसका वैयक्तिक और स्थानीय महत्त्व है। आज हमें आवश्यकता इस बात की है कि हम संगीत जगत् के सामने उस रहस्यों को सरलतम ढंग से स्पष्ट कर सकें ताकि इससे हर संगीत-प्रेमी लाभ उठा सकें।

कल्याण ठाठ और उसका महत्त्व

रामपुर-परम्परा जो कि सदारंग-परम्परा से संबंधित है, इनके वीणा-रहस्य को समझने की अति आवश्यकता है। इस परम्परा में कल्याण ठाठ को सबसे

पहला ठाठ मानते हैं। इसी ठाठ से अन्य नौ ठाठों की उत्पत्ति भी होती है। इसी कारण यमन या कल्याण को ही मूल ठाठ माना गया है। स्व० भातखण्डे जी ने अपनी क्रमिक पुस्तक मालिका के भाग 2 में सबसे पहला राग यमन लिया है और उसके लक्षण-गीत के शब्द भी इस प्रकार दिये हैं —

"प्रथम कल्याण ठाठ-जनक सांच मानिए"

"मारिफुन्नगमात" पृ० 76

'राग यमन' का प्राचीन नाम 'कल्याण' है। नाम से स्पष्ट है कि यह राग स्वतः मंगलमय व कल्याणकारी है। इस राग के स्वरों को गाने-बजाने से समस्त वातावरण में शान्त रस का प्रादुर्भाव होने लगता है और ऐसा अनुभव होता है जैसे प्रकृति सबका कल्याण करने के लिए आतुर है।

अब हम कल्याण ठाठ के स्वरों का परीक्षण करके देखें कि किसी विधि से इसके स्वरों से अन्य ठाठों का जन्म होता है। इससे पूर्व इस बात को ध्यान से समझना चाहिए कि स्वरों का उतार-चढ़ाव ही किसी नये क्रम को जन्म देता है।

कल्याण ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं इसमें मध्यम तीव्र है तथा अन्य सभी स्वर शुद्ध लगते हैं।

बिलावल ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं कल्याण ठाठ के मध्यम को कोमल कर देने से इस ठाठ की उत्पत्ति हुई।

खमाज ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं बिलावल ठाठ के स्वरों में निषाद कोमल कर देने से खमाज ठाठ की उत्पत्ति होती है।

काफी ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं खमाज ठाठ के गंधार को कोमल कर देने से काफी ठाठ की उत्पत्ति होती है।

आसावरी ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं काफी ठाठ के स्वरों में धैवत करने से आसावरी ठाठ की उत्पत्ति होती है।

भैरवी ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं आसावरी में ऋषभ स्वर कोमल कर देने से भैरवी ठाठ की उत्पत्ति होती है।

मारवा ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं कल्याण ठाठ में ऋषभ कोमल कर देने से मारवा ठाठ की उत्पत्ति होती है अथवा आसावरी ठाठ के स्वरों की स्थिति बदलने से (कोमल को तीव्र और तीव्र को कोमल) मारवा ठाठ के स्वर प्राप्त होंगे।

पूर्वी ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं मारवा ठाठ के धैवत कोमल कर

देने से पूर्वी की उत्पत्ति होती है अथवा काफी ठाठ के स्वरों की स्थिति बदलने से (कोमल को तीव्र और तीव्र को कोमल) पूर्वी ठाठ के स्वर प्राप्त होंगे।

तोड़ी ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं पूर्वी ठाठ के स्वरों में गांधार कोमल कर देने से तोड़ी ठाठ की उत्पत्ति होती है। अथवा खमाज ठाठ के स्वरों की स्थिति बदलने से (कोमल को तीव्र और तीव्र को कोमल) तोड़ी ठाठ के स्वर प्राप्त होंगे।

भैरव ठाठ के स्वर—स रे ग म प ध नि सं तोड़ी ठाठ के गांधार को तीव्र और मध्यम को कोमल कर देने से भैरव ठाठ की उत्पत्ति होती है।

इस प्रकार रामपुर-परम्परा का यह रहस्य प्रशंसनीय है कि एक ही ठाठ के स्वरों को लौटने-पलटने से नये-नये ठाठों की उत्पत्ति होती है, अतः इस क्रिया को 'ठाठ-लौटना' कहते हैं। इस प्रकार कल्याण ठाठ से उत्तर हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति के दसों ठाठों की प्राप्ति सरलतम ढंग से हो जाती है। यह वैज्ञानिक पद्धति है। आचार्य बृहस्पति के अनुसार इस पद्धति से ठाठ बनाने की क्रिया को बहादुर हुसैन खां की परम्परा में 'ठाठ-भेद' कहते हैं।

मूर्च्छना पद्धति पर आधारित स्वर-भेद प्रक्रिया से ठाठों की प्राप्ति

रामपुर की परम्परा में दूसरी विधि से भी ठाठों की प्राप्ति होती है जो मूर्च्छना-पद्धति से मिलती है जिसे 'स्वर-भेद' नाम दिया है। तात्पर्य यह है कि इस विधि में एक ठाठ के प्रत्येक स्वर को षड्ज की स्थिति में रखकर देखते हैं तो आधार स्वर के बदलने से स्वरों की स्थिति अपने आप बदल जायेगी। इसी कारण यह मूर्च्छना पद्धति से मिलती-जुलती प्रक्रिया होने पर भी भिन्न है क्योंकि इसमें स्वरों के नाम बदल जाते हैं जबकि मूर्च्छना पद्धति में स्वरों के नाम नहीं बदले जाते। दक्षिण के विद्वानों ने इस क्रिया को षड्ज-चालन भी कहा है।

स्वर-भेद प्रक्रिया द्वारा ठाठ की प्राप्ति

कल्याण ठाठ

स रे ग म प ध नि स रे ग म प ध नि

स रे ग म प ध नि—भैरवी ठाठ

स रे ग म प ध नि—काफी ठाठ

स रे ग म प ध नि—बिलावल ठाठ

स रे ग म प ध नि—मेलदलन ठाठ

स रे ग म प ध नि—आसावरी ठाठ

स रे ग म प ध नि—खमाज ठाठ

उपरोक्त विधि से कल्याण के प्रत्येक स्वर से विभिन्न ठाठों के स्वरों की प्राप्ति होती है। इनमें से भैरवी, काफी, बिलावल, आसावरी और खमाज 5 ठाठों का प्रयोग हिन्दुस्तानी संगीत में होता है। मेलदलन के स्वर हमारे ठाठों के अंतर्गत नहीं आते हैं क्योंकि इसमें पंचम स्वर नहीं मिलता अतः इस स्वर समूह को आचार्य बृहस्पति ने 'मेलदलन' नाम दिया है।

षड्ज-चालन की यह प्रक्रिया किसी भी राग के विस्तार को बढ़ाने में सहायक है। इस रहस्य को ध्यान में रखते हुए गायक-वादक कभी-कभी किसी राग को गाते-गाते किसी भी स्वर को आधार स्वर मानकर अन्य रागों की छाया दिखाते हैं। इस काम के लिए बड़ी कुशलता की आवश्यकता है। कल्याण ठाठ की तरह ही बिलावल, खमाज, काफी, आसावरी तथा भैरवी ठाठों में स्वर-भेद प्रक्रिया से संपूर्ण जाति के रागों के स्वरों की प्राप्ति होगी। जबकि मारवा, पूर्वी और भैरव ठाठों के स्वरों में 'रे-ग' का अन्तर 'स ग' के अन्तर के समान होने से इन ठाठों से औडुव जाति के रागों के स्वरों की प्राप्ति होगी। रामपुर के गुणियों ने इस प्रकार की प्रक्रियाओं का प्रयोग व्यवहार में किया था जिसमें छम्मन साहब का नाम विशेष उल्लेख-नीय है।

मारवा ठाठ के स्वरों का अभ्यास करते समय यदि 'रिषभ' को आधार मान कर गायन करेंगे तो मालकोश राग की छाया आएगी, गायक आसानी से इस राग की फिरत कर सकता है। उसी प्रकार मारवा के गंधार स्वर को आधार मानकर राग दुर्गा, तीव्र मध्यम को आधार मानकर धानी, पंचम को आधार मानकर धैवत और षड्ज छोड़ते हुए, हिंडोल, धैवत को आधार मानकर भोपाली तथा निषाद को आधार मानकर मेघ राग गा सकते हैं। ये सभी राग औडुव जाति के हैं जिनमें मारवा ठाठ के षड्ज व पंचम स्वरों की आवश्यकता नहीं होती। इसी कारण मारवा राग को षड्जहीन करके भी गुणी लोग गाते थे, इसलिए इस प्रकार के षड्जहीन मारवा को 'निखरजा' मारवा कहते थे। इस रहस्य को रामपुर के गुणियों ने सेनियों की परम्परा से प्राप्त किया था। स्वर-भेद की यह रीति गुरु-शिष्य परम्परा से चली आती रही है। आचार्य बृहस्पति ने जो स्वयं रामपुर दरबार के गुणियों के सम्पर्क में रहे थे, इन रहस्यों को उनके मुख से सप्रयोग कहलवाया।

'स्वर-भेद' का महत्त्व निम्न शब्दों से स्पष्ट है—

'स्वर-भेद से रागों के ढांचे प्राप्त होते थे। वीणा जैसे वाद्यों में बाएं हाथ की क्रिया में मींड प्रधान रहती थी। 'स्वर-भेद' को आधार मानकर विभिन्न रागों

को कभी नहीं भूला जाना चाहिए। ठाठ शब्द का अर्थ ही ठठरी या ढांचा है।"

(संगीत चिन्तामणि, प्रथम संस्करण, पृ० 394।)

स्वर-भेद की प्रक्रिया का प्रयोग रामपुर ने गुणियों के हारमोनियम जैसे टेम्पर्ड स्केल वाद्य पर किया। इस वाद्य की खूबी यही है कि इसमें स्वर अपने स्थान पर स्थिर रहते हैं, बेसुरेपन की नाममात्र भी आशंका नहीं होती है। हारमोनियम के पर्दों को बारी-बारी से षड्ज मानकर आसानी से यह प्रक्रिया की जाती है। इसी कारण रामपुर के संगीत-प्रेमी छम्मन साहब, जानी साहब, भैया गनपतराव और मौजुद्दीन खां सभी अच्छा हारमोनियम बजाते थे। यही कारण है कि रामपुर-परम्परा में ठुमरी गायन का विकास अद्वितीय ढंग से हुआ। भैया गणपतराव और मौजुद्दीन खां ठुमरी-गायन के सम्राट थे। दोनों का संबंध रामपुर से निरन्तर बना रहा था। ठाठ-भेद और स्वर भेद का काम द्रुतलय में हारमोनियम पर आसानी से किया जा सकता है।

सदारंग परम्परा का यह रहस्य रामपुर के गुणियों ने ग्रहण किया और इसका प्रयोग आलाप में किया जिससे राग की गहराई में उतरने का लाभ प्राप्त हुआ। सेनियों के इस भेद को ठुमरी-दादरा गानेवालों ने ग्रहण करके इन कलाकारों ने हारमोनियम जैसे बेसुरे वाद्य को भी रंगीन और सुरीला बना दिया।

नवीन रागों के निर्माण की वैज्ञानिक पद्धति

भातखंडे[1] जी ने कहा है कि बिलावल राग के सभी प्रकार रात के तमाम रागों के जवाब हैं और प्रातर्गेय हैं।

भातखंडे जी ने अनेक गायकों का यह मत बताया है, परन्तु इस पर स्वयं निर्णय नहीं दिया है।

रामपुर परम्परा के मर्मज्ञ आचार्य बृहस्पति का कहना है कि कल्याण ठाठ का पंचम ही बिलावल ठाठ का षड्ज है। कल्याण ठाठ का धैवत बिलावल का रिषभ है, कल्याण का निषाद बिलावल का गंधार है, कल्याण का षड्ज बिलावल का मध्यम है। कल्याण का रिषभ बिलावल का पंचम है। कल्याण का गंधार बिलावल का धैवत है, कल्याण का मध्यम बिलावल का षड्ज है। अर्थात् कल्याण के निम्न स्वर—

प ध नी सा रे ग म॑ प

ही

1. भा० सं० शा०, भाग 4, पृ० 730।

हैं।

एमन-कल्याण के दोनों मध्यम ही अल्हैया बिलावल के दोनों निषाद हैं।

कल्याण के पूर्वांग में स्थित गंधार ही बिलावल के उत्तरांग में स्थित धैवत है। इस दृष्टि से कल्याण और बिलावल में सहज संबंध है।

यदि बिलावल गाते समय तानपूरे के बायीं ओर का तार शुद्ध मध्यम में मिलाया जाये, तो यह स्थिति बच्चों की भी समझ में आ जाएगी। सामान्यतः बिलावल गाते समय लोग तानपूरे पर पंचम स्थापित करते हैं जोकि कल्याण का रिषभ है इसीलिए बिलावल में कल्याण का रूप सामान्य व्यक्तियों के लिए छिपा रहता है। इसीलिए बिलावल को सवेरे का कल्याण कहते हैं।

बिलावल ठाठ और कल्याण ठाठ के रागों का परस्पर मिश्रण अति मधुर और स्वाभाविक होता है जैसे—राग देवगिरि और एमनी बिलावल/राग देवगिरि की रचना बिलावल के स्वरों में शुद्ध कल्याण के मिश्रण से हुई है। उसी प्रकार आरोह में एमन और अवरोह में बिलावल के स्वरों को कुशलता से गुंथन से एमनी बिलावल राग की रचना होती है। बिलावल प्रातःकालीन राग है जबकि कल्याण रात्रिगेय राग है, फिर भी दोनों रागों की मिश्रित स्वर-रचना कर्णप्रिय लगती है।

पूर्वी ठाठ के पंचम को षड्ज मानने पर तीव्र धैवत के ललित की उत्पत्ति इस प्रकार होती है—

पूर्वी—प ध नी स रे ग म प

ललित—स रे ग प म ध नी सं

भातखंडे जी की परंपरा में ललित में तीव्र धैवत का व्यवहार होता है, वह ललित पूर्वी ठाठ का ही प्रसाद है।

कोमल धैवत के ललित का जन्म रात्रिकालीन राग से न होकर प्रातःकालीन तोड़ी ठाठ से हुआ है। तोड़ी ठाठ के पंचम को षड्ज मानने पर कोमल धैवत की ललित होती है जो इस प्रकार है—

तोड़ी—प ध नी सं रे ग म प

ललित—स रे ग म म ध नी सं

काफी ठाठ के पंचम के षड्ज मानने से आसावरी ठाठ की उत्पत्ति हुई है—

काफी—प ध नी सं रे ग म प

आसावरी—स रे ग म प ध नी सं

काफी ठाठ के अनेक राग रात्रिगेय हैं। विचार करने पर आसावरी ठाठ के अनेक राग प्रातःकालीन राग रात्रिगेय राग के जवाब हैं।

खमाज ठाठ के पंचम को षट्ज मानने पर काफी ठाठ निकलता है—

खमाज—प ध नी सं रे ग म प

काफी—स रे ग म प ध नी सं

उपरोक्त रागों के निर्माण का आधार 'स्वर-भेद' है जोकि आधार स्वर बदलने से प्राप्त हुए, यह मूर्च्छना-पद्धति के समान है।

दस ठाठ में से भैरव, पूर्वी, तोड़ी और मारवा ठाठ भारत या शाङ्र्गदेव की मूर्च्छनाओं में नहीं आते हैं। शेष छः ठाठ मूर्च्छनाओं में आते हैं। मूर्च्छना से प्राप्त न होने वाले पूर्वोक्त चारों ठाठों का मिश्रण जब मूर्च्छनाजन्य ठाठों के रागों में किया जाता है तब विभिन्न स्वर गुच्छों के पारस्परिक संबंध का ध्यान रखते हुए स्वर-योजना की जाती है। ऐसी दशा में चतुःश्रुति, सप्तश्रुति, नवश्रुति और तेरह श्रुतियों के संबंधों का ध्यान रखते हुए जाल बुना जाता है।

'स—ग' संबंध **षट्श्रुतिक** है, यही संबंध 'प—नी' और 'म—ध', 'रे—म' और 'ध—सं' में है।

46-125   22 2-301

सप्त श्रुतिक संबंध—'स—ग', रे—म (च्युत); 'रे—म', रे—म

97   23-120   28-125   51-148,

ग—प (च्युत), ग—प, ग—ध म—ध नी—रे में है।

74-171   79-176 102-199 125-22 2, 250-347

तात्पर्य यह है कि रागों के मिश्रण में पंचश्रुतिक और अष्ठश्रुतिक स्वर अनिष्ट होते हैं।

आचार्य बृहस्पति ने तोड़ी, ललित और रामकली के मिश्रण से 'प्रभात रंजनी' राग की सृष्टि की है जो परस्पर संवादी स्वर गुच्छों की योजना का परिणाम है।

किसी भी दो या दो से अधिक रागों को मिश्रित करने का नियम यह है कि ऐसे विशिष्ट स्वर समूहों के जोड़े परस्पर बनते जायें जो सप्तक के मंद्र, मध्य और तार संस्थानों में सवाल-जवाब का काम करें। जैसे स्वरों का परस्पर संवाद यदि इष्ट होता है तब दोनों स्वरों को साथ-साथ बजाने से कर्णप्रिय लगते हैं।

सवाल | जवाब

ध नि ध प़ म प़ नी़ सं — रे ग रे स नि़ स ग म

नि स रे स नि़ स — ग म म म ग म

रे नी नी स — ध म म प

उपरोक्त सवाल जवाब में तीनों राग स्पष्ट झलकते हैं। यह कलाकार की कुशलता पर निर्भर है कि वह तीनों रागों के रंगों को किस प्रकार चित्रित करता है। उसे तीनों रागों का पूर्ण ज्ञान होगा तभी वह स्वर-गुच्छों को एक ही धागे में पिरो सकेगा ताकि तीनों राग अपने-अपने व्यक्तित्व को कायम रखते हुए भी एक विभिन्न रूप खड़ा करते हैं। यह प्रभातरंजनी राग स्व० आचार्य महोदय के मस्तिष्क की रचना है—इस राग में बंदिशें भी उनके द्वारा बहुत सुन्दर व अनुकूल बनी हैं जिसका आनन्द उन्हें स्वयं गाकर अथवा बजाकर अनुभव करने में है।

राग मिश्रण के नियम

राग निर्माण के लिए यह प्रक्रिया उपयोगी सिद्ध हुई है—जोकि बुद्धिप्रधान और आनन्द-दायक भी है इसके लिए दो प्रमुख तत्त्वों पर विशेष महत्त्व दिया जाता है। प्रथम जो प्रधान राग हो उस पर कलाकार का पूर्ण अधिकार हो और द्वितीय सहायक रागों की जानकारी भी अच्छी हो ताकि राग-मिश्रण के समय स्वाभाविक ढंग से राग का रूप दिखाया जा सके, जिसके आनन्द कलाकार स्वयं लेगा और श्रोतागण भी मिश्रण को सुनते समय बार-बार आश्चर्य को अनुभव करेंगे। मिश्र राग का रस लेने के लिए श्रोताओं को भी संगीत विषयक थोड़ा ज्ञान आवश्यक है तभी वे उस मिश्रण के सौन्दर्य को समझ सकेंगे।

"जिस प्रबल राग में दूसरे राग को मिलाकर मिश्र राग का निर्माण किया जाता है, वह प्रबल राग मिश्रण के आरोह, अवरोह, पूर्वांग या उत्तरांग इत्यादि में से एक अथवा अनेक जगह लाया जा सकता है"—राग विज्ञान, भाग 6।

"इन सब नियमों का यही उद्देश्य है कि प्रबल राग प्रकृति की हानि न हो तथा दूसरे राग के मिश्रण से बनाई गई नवीन मिश्र राग रचना मूल राग के रसानुकूल और अधिक श्रवण मधुर हो। इस तत्त्व का पालन प्रायः सभी मिस्र रागों में किया जाता है। कई मिश्र राग ऐसे पाये जाते हैं कि जिनमें दो राग समप्रमाण या बराबर मात्रा में मिले हुए रहते हैं। ऐसे रागों में अधिक-प्रभावी राग कौन-सा है, यह सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा ही निश्चित किया जाता है।"—राग

विज्ञान, भाग 6।

बसंत बहार—यह राग बसंत और बहार दो अलग-अलग रागों के मिश्रण से बना है। यह तो कलाकार की इच्छा पर निर्भर है कि वह किस राग को अधिक महत्त्व देता है। साधारणतः बसंत राग को ही प्रबल मानते हैं और उसमें बहार का मिश्रण करते हैं।

प्रायः मिश्रित राग अथवा नवीन राग अप्रचलित रहते हैं। जिन नवीन रागों का स्वरूप विस्तार सुलभ होगा और श्रवण-मधुर होगा वही राग भविष्य में लोक-प्रिय हो जाते हैं, तत्पश्चात् प्रचलित हो जाते हैं। जैसे राग मारू बिहाग और जोग, जोगकंस।

राग मिश्रण का दूसरा तत्त्व यह है कि किसी भी राग के स्वरों को हूबहू उसी प्रकार कायम रखते हुए गायकी अन्य राग की होने से भी राग का रूप बदल जाता है। जैसे—मेघमल्लार में सारंग के स्वर हैं किन्तु मल्लार अंग की गायकी से सारंग का रूप ही बिल्कुल बदल जाता है। ऐसे मिश्र रागों को गाते-बजाते समय यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिस राग का चलन दूसरे राग की स्वर-संगति को प्रदान किया जाता है। वह चलन दूसरे राग की स्वर-संगति के अनुरूप ही हो। उसमें राग के रस का भी ध्यान रखना उचित होगा क्योंकि यदि राग में करुण रस भाव है तो उसमें हम चंचल प्रकृति का भाव यदि दिखायेंगे तब रस-भंग होगा।

तीसरा नियम मिश्रत रागों के लिए यह है कि जो भी राग मिश्रित किये जायें वे एक-दूसरे के पोषक अवश्य होने चाहिएं। इस गुण के बिना राग-विस्तार सुलभ नहीं होगा। इसीलिए रागों का चयन एक ही ठाठ से करते हैं अथवा एक ही स्वर संगविग वाले राग लेते हैं ताकि राग की रचना सरलतम रीति से हो। मिश्र रागों की खूबी यह होती है कि छोटे से छोटे स्वर समूह द्वारा आप रागों को परस्पर जोड़ सकें और वे समूह परस्पर ऐसे घुलमिल जाएं जैसे दूध-पानी।

ऐसे रागों के नाम भी अक्सर उन रागों पर रखते हैं जो प्रबल रहते हैं जैसे पूरिया-कल्याण। इसमें दोनों राग अपने स्थान पर प्रमुख हैं पूर्वांग में पूरिया चमकता है तो उत्तरांग में कल्याण खिलता है अतः दोनों रागों के नाम से राग प्रचलित होता। अतः जिन रागों का नाम दो रागों के नामों से मिलकर बना होता है वे मुरक्कब या संकीर्ण कहलाते हैं। उनके नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता हैं कि आरोह-अवरोह में किस-किस राग का स्वरूप विस्तार में आयेगा। जैसे एमनी-बिलावल के आरोह में एमन और अवरोह में बिलावल मिले हैं।

स्व० आचार्य बृहस्पति ने कहा है कि—"अलग-अलग रंगों के रेशम की दो डोरियां हैं अगर उन्हें बट दिया जाये, तो दोनों रंग हर बल में बराबर-बराबर दिखाई देंगे, कोई भी एक रंग दूसरे रंग को दबायेगा नहीं। यही खूबी मुरक्कब

राग में होनी चाहिए।"

लाग-डाट से स्वरों का प्रयोग—किसी स्वर पर जाने का संकल्प किसी अन्य स्वर से किया जाता है वह **लाग का स्वर** कहा जाता है और जिस स्वर पर जाकर रुक जाता है वह **डाट का स्वर** कहा जाता है क्योंकि डाट का अर्थ है रुकना या स्थिर रहना। ये लाग आरोह की ओर से हो सकती है और अवरोह की ओर से भी।

सितारवादक या सरस्वती वीणावादक दरबारी बजाते समय मन्द धैवत के परदे को आधार बनाकर मध्य सप्तक के गांधार और मध्यम तक के स्वरों को सरलतापूर्वक मींड के द्वारा निकाल लेंगे। उन सब सुरों के लाग का स्वर धैवत कहलायेगा जिन स्वरों तक राग की छाया के अनुसार धैवत से सीधे जायेंगे।

मूलत: आरोह की ओर स्वरों की प्रवृत्ति चढ़ने की ओर होती है और अवरोह की ओर उतरने की। इस दृष्टि से आरोह की ओर दुर्गा और अवरोह की ओर गुणकली के स्वर रखे जायें तो—

आरोह—स रे म प ध सं

अवरोह—सं ध प म रे स

आचार्य बृहस्पति ने भुवनमोहिनी की सृष्टि की है। यदि इन सब स्वरों को आरोह क्रम में रख दिया जाये तो—

आरोह—स रे रे म प ध ध सं

हो जायेंगे जो दायित नात्यों के कनकांगी या मुखारी मेल की स्वरावली हैं।

यदि आरोह की ओर तिलंग और अवरोह की ओर धानी हो तो स्थिति यह होगी—

आरोह—स ग म प नी सं

अवरोह—सं नी प म ग स

उपरोक्त स्वरावली राग जोग की हो गई जोकि दाक्षिणात्यों के रामामात्य का 'चलनाट' मेल होगा—स ग ग म प नी नी सं

इस प्रकार सिद्धान्त यह हुआ कि दो संवादी स्वरों को आरोह में तीव्र रखा और अवरोह में उतार दिया है।

आरोह—स ग म ध नी सं

अवरोह—सं नी ध म म स

उपरोक्त नया राग बन गया जिसका सिद्धान्त हुआ कि मध्यम का संवादी स्वर ध नी सं हुए। आरोह में रागेश्री और अवरोह में मालकंस हुए। उसी प्रकार एक नया स्वरूप निम्न हो सकता है—

आरोह—ध नि स ग म ध नि सं

अवरोह—सं ध ...

'ध नी प' और 'ग म रे' संवाद गुच्छ है।

आचार्य बृहस्पति द्वारा रचित **राग महालक्ष्मी** के स्वर निम्न हैं—

आरोह—ध नि स रे नि स ग म, ध नि सं रें नि सं

अवरोह—सं ध नी प म, ग म रे स।

इसमें 'नी स रे' का जवाब 'ग म प' भी शामिल किया जा सकता है।

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक असंख्य रागों की रचना हो चुकी है। इन रागों का वर्गीकरण शुद्ध, छायालग और संकीर्ण भेदों द्वारा किया गया है।

रामपुर के छम्मन साहब की परंपरा में राग निर्माण के कुछ नियम 'संगीत चिन्तामणि' से उद्धृत किये जा रहे हैं—

(1) किसी भी ठाठ के कोमल स्वरों को तीव्र और तीव्र स्वरों को कोमल कर देना 'ठाठ लौटाना' कहलाता है। अमीर खुसरो ने इसी प्रकार का आश्रय लेकर अनेक रागों में परिवर्तन किया था। सेनियों की परम्परा में यह प्रभाव खुसरों की परम्परा से आया था।

काफी ठाठ को लौटाने से पूर्वी ठाठ बन जाता है, जैसे—

काफी ठाठ—स रे ग म प ध नि सं

|

पूर्वी ठाठ—स रे ग म प ध नि सं

पहले बसन्त काफी ठाठ में गाया जाता था। अमीर खुसरो ने ठाट लौटाकर उसे पूर्वी टाट में कर दिया। यही इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) का बसन्त है, जो आजकल प्रचार में है।

श्री ठाठ भी इसी ढंग से काफी टाट के स्थान पर पूर्वी ठाठ में गाया जाने लगा है।

काफी ठाठ की धनाश्री से पूर्वी ठाठ की धनाश्री भी इसी प्रकार बनी है। जिसका मेल पूरियाधनाश्री में है। भातखंडे के साहित्य में इस धनाश्री की चर्चा नहीं है, किन्तु रामपुर के गायक इस धनाश्री को बरतते हैं।

खमाज टाट को लौटने से तोड़ी ठाठ बन जाता है।

खमाज ठाठ—स रे ग म प ध नि सं

तोड़ी ठाठ—स रे ग म प ध नी स

आसावरी ठाठ को लौटकर मारवा ठाठ का निर्माण किया गया है—

आसावरी—स रे ग म प ध नि सं

|

मारवा—स रे ग म प ध नी सं

(2) ठाठ के कुछ स्वरों को उलट देना और कुछ को जैसा का तैसा रहने देना दूसरा नियम है, जैसे —

भीमपलासी—नि स ग म प नि सं नि ध प ग रे स।

भीमपलासी के निषाद और मध्यम को आरोह में और धैवत तथा ऋषभ को अवरोह में लौटकर और गांधार को जैसा का तैसा रखकर शाहजहां-कालीन शेख बहाउद्दीन जकरिया ने मुलतानी का निर्माण इस प्रकार किया है—

मुलतानी— नि स ग म प नि सं नि ध प म ग रे स।

(3) राग निर्माण का तीसरा नियम ठाठ के स्वरों का जैसा का तैसा रखते हुए उनकी गति में परिवर्तन करना और विश्रान्ति के स्वरों को बदल देना है। सोहनी, पूरिया तथा मारवा इस नियम के उदाहरण हैं।

(4) ठाठ भी लौटा जाए और विश्रान्ति-स्वर भी बदल जाए। मालकोस और हिंडोल इस नियम के उदाहरण हैं।

(5) किसी राग के स्वरूप और ठाठ को अक्षुण्ण रखते हुए उसमें एक स्वर की वृद्धि कर दी जाए। पूरिया से माली गौरा बनाने के लिए उसमें पंचम का सम्मिलित कर दिया जाना इस नियम का उदाहरण है।

(6) किसी राग में से एक स्वर कम करके उसकी गति को उन्मुख कर देना भी नवीन राग की सृष्टि करता है। तोड़ी में से पंचम निकालकर उसकी गति को मध्य धैवत की प्रधानता से उन्मुख किया गया है।

(7) एक जैसे स्वर-समुदाय दो विभिन्न ठाठों को लेकर आरोह में एक ठाठ और अवरोह में दूसरा ठाठ रखना भी नये राग के जन्म का कारण होता है। आरोह और अवरोह में कुछ स्वर सदृश होते हैं।

(8) एक ठाठ का पूर्वार्ध और दूसरे ठाठ का उत्तरार्ध लेकर भी नवीन राग का निर्माण किया जाता है। पूर्वार्ध में भैरवी और उत्तरार्ध में भैरव ठाठ के स्वर रखकर सेनिए अपना पीलू गाते हैं और उसे शुद्ध पीलू कहते हैं।

छम्मन साहब के दरबार में संगीत ग्रंथों पर भी विचार हुआ था, परन्तु इस विषय में उन्हें अधिक सफलता न मिली।